# हिन्दी साहित्येतिहास में कबीर

डॉ. अजयपाल सिंह
सहायक आचार्य (हिन्दी), देश भगत विश्वविद्यालय, मंडी गोबिन्दगढ, पंजाब

कबीर की जन्मतिथि आज भी विवादास्पद है। अलग – अलग विद्वानों ने उनकी जन्मतिथि का आधार अलग – अलग तथ्यों को माना है। कबीर के जन्म के संबंध में कबीर – पंथियों में एक दोहा प्रचलित है –

कबीर की जन्मतिथि आज भी विवादास्पद है। अलग – अलग विद्वानों ने उनकी जन्मतिथि का आधार अलग – अलग तथ्यों को माना है। कबीर के जन्म के संबंध में कबीर – पंथियों में एक दोहा प्रचलित है –

**चौदह सौ पचपन साल गए, चन्द्रवार एक ठाठ ठए।**
**जेठ सुदी बरसात को पूरनमासी तिथि प्रगट भए।।**
**घन गरजे दामिनि दमके बूँद बरषे झर लाग गए।**
**लहर तालाब में कमल खिले तहँ कबीर भानु प्रगट भए।**

यह दोहा कबीरदास जी के प्रधान धर्मदासजी का लिखा हुआ कहा जाता है। इसके अनुसार कबीर साहब का जन्म (संवत) 1455 के ज्येष्ठ सुदी पूर्णिमा सोमवार को हुआ था। बाबू श्याम सुंदरदास ने ‘साल गए’ के आधार पर संवत् 1456 माना है।

कबीर के जीवन काल का निर्धारण करने के लिए अधिकां-ा विद्वानों ने सामान्यतः उनके मरण को आधार बनाया है। कबीर के जन्म को लेकर अनेक प्रमाणों को एकत्रित कर निष्कर्ष निकालने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। विद्वानों में इन पर मतैक्य नहीं है।

कबीर का उल्लेख अकबर के समकालीन कवि अबुल फजल ने अपने ग्रंथ ‘आइने अकबरी’ में किया है। यह ग्रंथ अकबर के 48 वें राज्यकाल में सन् 1598 में लिखा गया था। अबुल फजल ने ग्रंथ में कबीर का दो बार उल्लेख किया है। प्रथम उल्लेख में कबीर को मुजाहिद (एकश्वरवादी) कहा है तथा दूसरी बार एकश्वरवादी कबीर द्वारा ‘पुरी’ में विश्राम लेने (मृत्यु) का उल्लेख किया गया है। अबुल फजल नें लिखा है, ”एकेश्वरवादी“ कबीर जिसने ‘ईश्वर एकता’ का प्रतिपादन किया, यहाँ दफन किया गया है। उसके लिए स्वर्ग का द्वार खुला और वह अपने समय के स्वींत धार्मिक सिद्धान्तों का विरोध करता रहा।“2

संत कबीर के निधन के सम्बन्ध में भी कुछ पंक्तियों का उल्लेख मिलता है –

**”संवत् पन्द्रह सौ पिच्छत्तरा, किया मगहर को गमन।**
**माघ सुदी एकादशी, रेलो पवन में पवन।।“**
**”पन्द्रह सौ उनचास में, मगहर कीन्हों गौन।**
**अगहन सुदी एकादशी, मिल्यो पौन में पौन।।“**

इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखकर कबीर का निधन संवत् 1575 स्वीकार करते हैं। कबीर की आयु के संबंध में एक विद्वान ने कहा कि, ‘फक्कड़, मस्ती तथा माया – मोह से दूर रहकर कोई भी व्यक्ति इस आयु को प्राप्त कर सकता है।’3

कबीर के जन्म – स्थल, माता – पिता तथा जीवनवृत के विषय में विद्वान एक मत नहीं हैं। कबीर का जन्म – स्थल काशी माना गया है। कबीर ने मगहर में अपने प्राण त्यागे।

”जो काशी तन तजे कबीरा तो रामहि कहा निहोरा रे।
कबीर के संबंध में उल्लेख है कि ”उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके मृत शरीर के स्थान पर फूल मिले जिसे हिन्दू – मुस्लिम धर्म के लोगों ने बाँट लिए तथा अपनी – अपनी विधि से निर्वाह किया।“4

## कबीर नाम की व्याख्या –

”बोधानन्द की संस्ेंत टीका“5 में कबीर के नाम की व्याख्या की गई है –

‘कु = आधार, इरा – वाणी, = (कबीर)
क = वेद और कैवल्योपनिषद्, बो = विज्ञान, र = वह, नि = बीज = कबीर

विभिन्न व्याख्याकारों ने कबीर नाम के पर्यायवाची बताये हैं, ‘ब्रह्म, श्रुति, जीवन्मुक्त, शास्त्र, मुमुक्षु, ज्ञानी आदि।

कबीर की जाति –

कबीर का लालन – पालन एवं पोषण जुलाहा परिवार तथा परिवश में हुआ था। आचार्य हजारीप्रसाद जी द्विवेदी ने अपने ग्रंथ ‘कबीर’ की प्रस्तावना में ‘जुलाहा’ शब्द तथा जाति की उत्पत्ति का विशद् विवेचन किया है। कबीर ने स्वयं को कई बार ‘जुलाहा’ कहा है। यथा –

”जाति जुलाहा मति कौ धीर।
हरषि – हरषि गुन रमै कबीर।।“

विभिन्न शोधों से यह पाया गया कि कबीर कोरी जुलाहा जाति के थे। यह एक ही जाति थी। बाद में बहुसंख्या में कोरी – जुलाहा कबीर पन्थी बन गये थे।

कबीर जुलाहा जाति के थे अतः रामानन्द ने इन्हें शिष्य बनाना अस्वीकार कर दिया। कबीर ने राम नाम मंत्र अंगीकार कर रामानंद को अपना गुरू बना लिया व स्वयं को रामानन्द का शिष्य घोषित कर दिया। विद्वानों का एक दल – यथा – डॉ. आर. पी. त्रिपाठी तथा डॉ. मोहन सिंह, बैस्कट आदि रामानन्द को कबीर का गुरू स्वीकार नहीं करते हैं। डॉ. मोहन सिंह का मत है कि, ”कोई लौकिक व्यक्ति कबीर का गुरू नहीं हो सकता।“7

कबीर ने अपनी वाणी में गुरू महत्व बताया है –
”ना गुरू मिल्या न शिष भया, लालच खेला डाव।
दून्यू बूड़े धार में, चढ़ि पाथर की नाव।।“

कबीर वाणी तथा कबीर का राम नाम के प्रति मोह व जनश्रुति भी स्वामी रामानंद को उनका गुरू स्थापित करते हैं-

"हम तिसका बहु जानिआ भउ।
जब हुएं पाल, मिले गुरू देउ।।
कहु कबीर हम ऐसे लखन।
धनु गुरूदेव अतिरूप विचखन।।"

## कबीर की रचनाएँ –

कबीर वाणी पर प्राचीनतम ग्रंथ 'बीजक' है। इसका प्रकाशन सन् 1868 में हुआ। कबीर की रचनाओं को साखी, शबद व रमैनी में उल्लखित किया जाता है। कबीर की रचनाओं में विशेषतः उनकी भाषा के संबंध में विभिन्न विद्वानों ने निष्कर्ष दिए हैं। "कबीर साहित्य के प्रसंग में लेखक द्वारा स्वामी बोधानन्दं त विज्ञान - बीजक में संकलित साखी तथा वसन्त, चाचरी, हिंडोला, विरहुली रूप लघुंतियों का संग्रह संस्ंत व्याख्या का समुद्धारण हिन्दी व्याख्या सहित किया गया है। इनका प्रकाशन तीन ग्रंथों में किया गया है।"8

अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध ने कबीर भाषा पर लिखा है - "कबीर साहब के ग्रंथों का आदर कविता दृष्टि से नहीं, विचार दृष्टि से है। कहीं - कहीं उनकी भाषा में कुछ गंवारूपन आ जाता है।"9

कबीर के साहित्य की भाषा के संबंध में सर्वथा सशक्त मत डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी का है, "भाषा पर कबीर का जबर्दस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया है, बन गया है तो सीधे - सादे नही ंतो दरेरा देकर। भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार - सी नजर आती है। उनमें मानों ऐसी हिम्मत ही नहीं कि इस लापरवाह फक्कड़ की किसी फरमाइश को नाहीं कर सके।"10

कबीर की भाषा में अलग - अलग भाषाओं के शब्द मिलते हैं। वे एक घुमन्तू संत थे। उनकी भाषा खिचड़ी है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है कि, "कबीर साहित्य में साखियाँ खड़ी बोली तथा पद रमैनी में अवधी तथा ब्रजभाषा का प्रयोग हुआ है।"11

''संत साहित्य'' में कबीर का स्थान

संत साहित्य में कबीर का महत्वपूर्ण स्थान है। कबीर की सोच पूर्णतः स्वतंत्र व निरपेक्षी थी। कबीर ने सभी धर्मो तथा समुदायों की धारणाओं से अवगत होकर वही कहा जो उनकी विचारधारा की कसौटी पर खरा उतरा था। कबीर ने पूर्ववर्तियों की विचारधारा और काल परम्परा से स्वयं को आबद्ध न कर सर्वथा नवीन व मौलिक विचार दिए। कबीर अनपढ़ थे परन्तु कबीर के काव्य में रहस्यात्मक शैली दिखाई पड़ती है।

कबीर ने संत ज्ञानश्वर के रहस्यवादी ज्ञान के अनुसार ही बोलने तथा नहीं बोलने की मध्य स्थिति से उन्मय अवस्था प्राप्त कर रहस्यवाद का अनुगमन किया था। कबीर कहते हैं कि यदि न बोलने वाले को बोलने के लिए विवश किया जाए तो कबीर की वाणी में यही गूंगे की भाषा कही गई है -

"अब मैं पाइबो रे, पाइबो रे ब्रह्म गियान।
अविकल अकल अनूपम देख्या, कहवां कह्या न जाई।
सैन करै मन ही मन रहसै, गूंगे जानि मिठाई।"12

कबीर के रहस्यवाद का विस्तृत विवेचन डॉ. रामकुमार वर्मा ने 'कबीर का रहस्यवाद'13 में किया है।

संत साहित्य में कबीर दर्शन स्वतंत्र एवं अनूठा स्थान रखता है। अंधानुकरण से अछूते रहकर उन्होंने अपने दार्शनिक मत सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया था। कबीर ने कहा,

"कथता बकता सुरता सोई।
आप बिचारै सोग्यानी होई।।

कबीर कहते हैं कि व्यक्ति अपने कर्म स्वयं करता है तथा स्वयं ही भोगता है।

कबीर एक सन्त ही नहीं वरन् कवि एवं समाज - सुधारक के साथ युगदृष्टा भी थे। कबीर ने जो ज्ञान प्राप्त किया वह उनके संघर्ष एवं परिश्रम का ही सुफल है, कबीर भी संत रविदास की भांति सभी के समक्ष स्वयं को जुलाहा बतानें में नहीं हिचकते थे।

संत कबीर भक्ति परम्परा के प्रमुखतम कवियों में गिने जाते हैं। भक्ति के साथ - साथ उनकी रचनाओं का अपना अप्रतिम साहित्यिक महत्व है। विशेष रूप से कबीर की उलटबाँसियाँ और सूफी परम्परा का काव्य भारतीय सन्त एवं हिन्दी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं। कबीर की साधना में प्रेम और राग की प्रधानता है जबकि योगियों में इसका अभाव है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कबीर के विषय में कहा, "सहजयानी सिद्धों और नाथपंथियों का अक्खड़पन कबीर में भरा है और उसके साथ उनका स्वाभाविक फक्कड़पन मिल गया है। इस परंपरागत अक्खड़पन और व्यक्तिगत फक्कड़पन ने मिलकर कबीरदास को अत्यधिक प्रभावशाली और आकर्षक बना दिया है।"14

कबीर के काल में दादू, सुन्दर दास, रैदास, मलूक दास, गुरूनानक, सहजो बाई, दयाबाई आदि प्रसिद्ध संत निम्न वर्ग से ही थे। सभी संतो ने बाह्याडम्बरों का विरोध किया तथा एकश्वरवाद की स्थापना की। डॉ. श्याम सुन्दर घोष लिखतें हैं - भारत के भक्तों, संतो और वैरागियों की एक लम्बी परम्परा रही है। इनमें से अधिकतर ऐसे रहे हैं जो ज्ञान, भक्ति और साधना की सीढ़ियों पर चढ़तें - चढ़ते लोक विमुख या लोक निरपेक्ष हो गए। उनकी निजी मुक्ति ही उनका प्रमुख सरोकार रही है। लेकिन कबीर ऐसे भक्त और संत नहीं थे। वे अन्त तक सामाजिक बने रहते हैं।"15 इस दृष्टि से 'संत साहित्य' के कवियों में कबीर अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

कबीर जनता के हितैषी थे। वे निम्न वर्ग की कठिन व दारूण अवस्था को देखकर दुःखी होते थे तथा उनको ईश्वरीय मार्ग का अनुसरण करने की प्रेरणा देते थे। कबीर स्वयं की मुक्ति की चिन्ता नहीं करते थे अपितु जनसाधारण के दुःख से दुःखी हो जाते थे -

"सुखिया सब संसार, खावे और सोवे।
दुःखिया दास कबीर, जागे और रोवे।।16

कबीर ने अन्य संतो की तरह ग्रहस्थ जीवन को नहीं छोड़ा। ना ही समाज से छिन्न - भिन्न ही रहे। कबीर मानते थे कि जनता को ईश्वर की अराधना का मार्ग बताकर उनके कष्टों को दूर किया जा सकता है, उन्हें कुछ हद तक सुखी व संतुष्ट किया जा सकता है। कबीर ने कहा कि गरीब व्यक्ति को आनन्द से रहकर, खुशी - खुशी ईश्वर की भक्ति करते हुए जीवन - यापन करना चाहिए। कबीर की वाणी में शाश्वत सत्य मिलता है, जिसके फलस्वरूप सुख व शान्ति का अनुभव किया जा सकता है -

"गोधन, गज धन, बाजि धन और रतन धन खान।

जब आये संतोष धन, सब धन धूरि समान।17

कबीर दास ने स्वयं के जीवन का लक्ष्य जनता को पूर्ण सुख, शांति और ईश्वर के मार्ग पर चलना, ही रखा। पहली बार एक संत ने लोगों को गरीबी में भी खुश रहने का संदश दिया। कबीर ने लोगों को नवीन जीवन मूल्यों को अपनाकर स्वयं का तथा समाज के विकास की प्रेरणा दी। तत्कालीन समय में भक्ति, साधना तथा मुक्ति का अर्थ तमाम निरपेक्षता था। समाज में यही मान्यता थी कि परिवार व समाज से पृथक होकर ही भक्ति के मार्ग पर बढ़ा जा सकता है। कबीर ने इसका पूर्णतया खण्डन किया :-

"प्रेम न बाड़ी उपजे, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा परजा जेहि रूचे, सीस देई ले जाय।18

कबीर बताते है कि ईश्वर की भक्ति व प्रेम के लिए स्वयं को शुद्ध व निर्मल रखना चाहिए। ईश्वर प्रेम को गरीब, अमीर, राजा, प्रजा कोई भी व्यक्ति अंगीकार कर सकता है। भक्ति में अहंकार का नाश तथा दुर्गुणों का बहिष्कार किया जाता है। कबीर की भक्ति में आध्यात्मिकता तथा भौतिकता का समन्वय देखने को मिलता है। इसी दृष्टि से संत - साहित्य में कबीर का स्थान अति उत्तम और सर्वथा भिन्न है। कबीर कहते हैं -

"जो सुख पाया राम भजन में,
सो सुख नाहिं अमीरी में।"

कबीर ने अपनी भक्ति भावना में संसार को त्यागने की बात नहीं कही है इसीलिए उनकी भक्ति अन्य संतो से भिन्न है -

"घर में जोग, भोग घर ही में,
घर तज वन नहीं जावे।
घर में जुगत, मुकत घर ही में,
जे गुरू अलख जखावै।"19

कबीर ने सदाचार पूर्ण जीवन - यापन पर बल दिया है। तीर्थ, व्रत, मंदिर, मस्जिद आदि का बहिष्कार कर अपने अन्तर्मन के भगवान को जानने की इच्छा कबीर करते हैं। कबीर जन साधारण को निर्गुण ब्रह्म का संदश देते हैं। वे कहते हैं कि जितना जीवन तुम्हें मिला है उसका उपयोग करो। डॉ. एल. वी. राम लिखते हैं, "कबीर की सांसेंतिक चेतना आधुनिक युग की सांसेंतिक चेतना है।"20 कबीर ने तत्कालीन परिस्थितियों को ध्यान में रखकर साधारण जनता को भक्ति का मार्ग सुझाया। वे मुख्यतया गृहस्थों को भक्ति का मार्ग बताते थे क्योंकि तत्कालीन राजनीति हिन्दू व मुसलमान गृहस्थों को आपस में लड़ा रही थी। यही कारण था कबीर जन - साधारण को राम - खुदा के चक्कर में न पड़ने की सलाह देते थे। उस समय समाज में धार्मिक अन्ध - विश्वास व रूढ़िवादी परम्पराएँ जोरों पर थी। विषम परिस्थिति में कबीर बौद्ध धर्म के पतन तथा मुसलमानी अत्याचार से पीड़ित निम्न वर्ग की सर्वसाधारण जनता को भक्ति का मार्ग सुझातें हैं। डॉ. केदारनाथ ने अपनी पुस्तक में लिखा है, "कबीर ने बौद्धों की करूणा और प्रेम, शंकर के अद्वैत दर्शन और नाथों के योग मार्ग से पर्याप्त रस लेकर एक ऐसे समाज की संरचना की ओर ध्यान दिया, जहाँ मानव मात्र मानव होने के कारण प्रतिष्ठित होगा, जाति, धर्म या वर्ण के कारण नहीं।"21

कबीर ने तत्कालीन परिस्थितियों का सामना उग्रता व कठोरता के साथ किया, तभी वे विषम परिस्थितियों के खिलाफ खड़े हो सके। कबीर ने पहली बार भारतीय जनता को बताया कि मथुरा और काशी में जीने या मरने से स्वर्ग की प्राप्ति नहीं होती। स्वर्ग तो व्यक्ति अपने सद्कर्मों से प्राप्त करता है। प्रायः सभी संतो ने संसार की क्षणभंगुरता, असारता की व्याख्या करके जीवन का लक्ष्य मौक्ष बतलाया। कबीर भी भक्त कवि थे लेकिन भौतिक जगत में रहते हुए ईश्वर भक्ति का मार्ग बताया। भक्ति कोई भी व्यक्ति कर सकता है, इसमें जाति, वर्ण का भेद आड़े नहीं आता है। कबीर की यह बहुत बड़ी देन है। कबीर ने मुक्ति के मार्ग को सरल बताया तथा इसकी प्राप्ति के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया। हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं-

"अवधू भूले को घर लावे
जो जन हमको भावे।
घर में जोग, भोग घर ही में,
घर तज वन नहीं जावे।
घर में जुगत, मुकत घर ही में,
जो गुरू अलख जगावे।"22

संत साहित्य के अन्य कवियों से कबीर का स्थान कई दृष्टियों से भिन्न है। कबीर ने समाज को अनेक प्रकार से शिक्षा दी। कबीर की दृष्टि, चिन्तन और व्यक्तित्व में विरोधाभास नहीं था। उन्होंने मंदिर, मस्जिद, कर्मकाण्ड से जनता को दूर रहने को कहा तथा भक्ति द्वारा आत्म शुद्धि की ओर अग्रसर किया। उन्होंने पाखण्डी पंडितों तथा धर्मगुरूओं से दूर रहने को कहा :-

"कहा हमार गाँठ दिठ बाँधों, निसिवार रहियो हुसियार।
ये कलिगुरू बड़े परपंची डारि ठगोरी सब जग मार।।"23

इस प्रकार संत साहित्य में कबीर का विशिष्ट स्थान एवं महत्व है। कबीर ने भक्ति व नीति का प्रचार किया। उन्होंने संघर्ष से पलायन का उपदश कभी नहीं दिया। उन्होंने संत साहित्य का पथ प्रदर्शन किया। हिन्दू - मुस्लिम एकता स्थापित कर भारतीय समाज को नई दिशा की ओर अग्रसर किया।

शुक्ल ने जायसी के माध्यम से कबीर को कवियों की श्रेणी से बाहर कर दिया। शुक्ल ने जायसी को 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में स्थान इसलिए दिया कि जायसी नें ग्रंथ के आरम्भ में पंडितों को नमन किया, द्विजों का, वेद, पुराणों का सम्मान किया। किन्तु कबीर ने ऐसा कोई कार्य नहीं किया। शुक्ल की कसौटी साहित्यिक मूल्यों की न रहकर वैदिक और धार्मिक मूल्यों की है। जब कबीर के दलित समाज का भला हिन्दू व मुसलमान दोनों पंथों से नहीं हो रहा था तो कबीर ने नया पंथ चलाकर कोई गलती नहीं की। हिन्दू धर्म ग्रंथों ने धर्म को साधारण धर्म और विशेष धर्म में बाँट रखा था। हिन्दू धर्म के वर्ण रक्षक चाहते थे कि कबीर साधारण धर्म का पालन करें व ब्राह्मणों के कार्यों में हस्तक्षेप न करें। कबीर को वेद विद्या, पठन का भी अधिकार नहीं दिया जाये। ऐसे समय में कबीर ने वेद - विद्या व ब्राह्मणों के खिलाफ आवाज उठाई। जिस समाज व्यवस्था ने कबीर को आजीवन अछूत बने रहने का शाप दिया था कबीर ने उसके विरूद्ध परिवर्तन का बिगुल बजाया।

शुक्ल ने कबीर को विदशी प्रभाव से प्रभावित बताया। किन्तु कबीर की शिक्षा सत्य पर आधारित थी तथा हिन्दुस्तान के गरीब लोग जानते थे कि कबीर उनके थे। कबीर ने दश की 85 प्रतिशत जनता का प्रतिनिधित्व किया जबकि 15 प्रतिशत द्विजों का प्रतिनिधित्व तुलसी ने किया। कबीर ने जनता के दर्द को पहचाना था। उन्होंने

समाज की सबसे सही लड़ाई लड़ी थी। सबसे बड़ी बात यह कि जायसी के 'पद्मावत' किताब लिखने का दलित समाज को क्या लाभ हुआ। समाज से अस्पृश्यता मिटाने में इसका कोई योगदान नहीं है। दलित वर्ग तथा अन्त्यजों की दृष्टि में ऐसे हजार काव्यों का निर्माण होता रहे तो उसका लाभ दलितों को कुछ न मिलेगा। दलित समाज को जायसी के प्रबन्ध महाकाव्य 'पद्मावत' के बजाय कबीर की साखियों और पदों की एक - एक पंक्ति से जीवन जीने की हिम्मत मिलती है। इस प्रकार कबीर गरीब जनमानस के पटल पर विद्यमान थे।

## संदर्भ–सूची

1. मानव की पारिभाषिकी कोश, साहित्य खंड, पृ.सं. 65.
2. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, द्वितीय खंड, गणपतिचंद्र गुप्ता, लोकभारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, वर्ष 2004, पृ.सं. -475.
3. कबीर के आलोचक - डॉ0 धर्मवीर, वाणी प्रकाशन, 21-ए, दरियागंज, नई दिल्ली, (भूमिका से उद्धृत)
4. कबीर साहित्य की प्रासंगिकता : सम्पादक विवेक दास, कबीर वाणी प्रकाशन केन्द्र, सतगुरू कबीर मंदिर, कबीर चौरा मठ, वाराणसी 1, 1978, पृ.सं.-153.
5. वही पृ.सं. - 154.
6. कबीर, डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई-4, तृतीय परिवार्द्धित संस्करण, जुलाई, 1950, पृ.सं.-21.
7. कबीर : पुनर्विचार का समय, आलेख, डॉ0 रामस्वरूप चतुर्वेदी, दिल्ली में आयोजित एक गोष्ठी में प्रस्तुत, पृ.सं. 3.
8. कबीर अकेला, डॉ0 रमेश चन्द्र मिश्र, संत साहित्य संस्थान, 3611, नेताजी सुभाष मार्ग, दरिया गंज, नई दिल्ली-'110002, प्रथम संस्करण 1999, पृ.सं.-38.
9. कबीर : आधुनिक संदर्भ में, डॉ0 राजदेव सिंह, लोक भारती प्रकाशन, 15 ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1, संस्करण 1999, पृ.सं.-147,.
10. वही, पृ0सं0 -170.
11. कबीर के कुछ और आलोचक - डॉ धर्मवीर, वाणी प्रकाशन, 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ.सं.-79.
12. भारतीय चिंतन और कबीर, डॉ0 वासुदेव सिंह, परिचय-2, अप्रेल-2001, पृ.सं.-30.
13. कबीर के कुछ और आलोचक - डॉ0 धर्मवीर, पृ.सं.-99
14. कबीर के कुछ और आलोचक - डॉ0 धर्मवीर, पृ.सं.-92
15. कबीर बानी : एक सौ अठाईस पदों का संकलन, संपादन और अनुवाद, अली सरदार जाफरी, राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0, 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, पहला राजकमल संस्करण 1999, पृ.सं-13.
16. वही, पृ.सं. - 21.
17. दलित - विमर्श, दलित - उत्कर्ष और दलित संघर्ष, डॉ0 शुकदेव सिंह, उत्तर प्रदेश : दलित साहित्य विशेषांक, सितंबर - अक्तूबर 2002, सूचना एवं जनसंपर्क विभाग, सूचना भवन, पार्क रोड, लखनऊ, पृ.सं.-18.
18. भगवान बुद्ध और उनका धर्म, डॉ0 भीमराव रामजी अम्बेडकर, अनुवादक भदन्त आनंद कौसल्यायन, भारतीय बौद्ध शिक्षा परिषद, जेतबन महाविहार, श्रावस्ती, बलरामपुर, उत्तर प्रदेश, द्वितीय संस्करण, 1970, पृ.सं.-269.
19. कबीर और रामानंद क्या बताती है किवदंतियाँ, पुरूषोत्तम अग्रवाल, बहुवचन-3, अप्रेल-जून 2000, पृ.सं. - 182.
20. कबीर - हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. - 117.
21. क.ग्रं. भ.प्र.लि., पृ.सं. - 441.
22. कबीर, हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. - 361.
23. कबीर के आलोचक, डॉ0 धर्मवीर, वाणी प्रकाशन, दूसरा संस्करण, 1998, पृ.सं. - 96.
24. हिन्दू कोड बिल और डॉ0 अम्बेडकर, सोहन लाल शास्त्री, सम्यक प्रकाशन, 32/3, क्लब रोड, पश्चिमपुरी चौक, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण 2003, पृ.सं. - 77.
25. डॉ. श्यौराज सिंह बैचेन, आलोचक, 'प्रेमचंद की नीली आंखे' की भूमिका में उद्धृत।
हिन्दी आलोचना एवं आलोचक, डॉ0 बच्चन सिंह